Advanced International Journal for Research (AIJFR)
E-ISSN: 3048-7641 ● Website: www.aijfr.com ● Email: editor@aijfr.com

दलित वर्ग के विकास में पंचायती राज की भूमिका गुना जिले के संदर्भ में (2001–2011)

विकास यादव

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, जीवजी विश्वविध्यालय, ग्वालियर (म. प्र)

सारांश

यह शोधपत्र वर्ष 2001 से 2011 के मध्य गुना जिले में दलित वर्ग के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक विकास में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। 73वें संविधान संशोधन के पश्चात भारत में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण को संवैधानिक आधार प्राप्त हुआ, जिसके अंतर्गत अनुसूचित जातियों को पंचायतों में आरक्षण प्रदान किया गया। अध्ययन 95 ग्राम पंचायतों तथा 153 उत्तरदाताओं में 52 दलित सरपंच एवं 101 सामान्य दलित नागरिक पर आधारित है। प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों से प्राप्त आंकड़ों का सांख्यिकीय परीक्षण किया गया। निष्कर्ष दर्शाते हैं कि राजनीतिक प्रतिनिधित्व में उल्लेखनीय वृद्धि हुई तथा दलित नेतृत्व उभरा परंतु सामाजिक–आर्थिक स्तर पर परिवर्तन सीमित रहा। कृषि से मजदूरी की ओर झुकाव भूमिहीनता निम्न शैक्षिक स्तर एवं आधारभूत सुविधाओं की कमी विकास प्रक्रिया में बाधा बने रहे। अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि पंचायती राज व्यवस्था ने दलित वर्ग को राजनीतिक मंच तो प्रदान किया है किंतु समग्र सशक्तिकरण के लिए संरचनात्मक सुधारों की आवश्यकता है।

मुख्य शब्द –पंचायती राज, दलित सशक्तिकरण, ग्रामीण शासन, सामाजिक न्याय, गुना जिला

परिचय

भारत में पंचायती राज व्यवस्था की जड़ें बहुत प्राचीन सामाजिक परंपराओं में हैं। पुराने समय में, ग्राम समुदाय स्वतंत्र इकाइयों के रूप में काम करते थे और स्थानीय विवादों के समाधान से लेकर संसाधनों के प्रबंधन तक की जिम्मेदारी पंचायतों ने निभाई थी। लोकतांत्रिक चेतना का मूल स्वरूप ग्राम–स्तरीय निर्णयों में सामूहिक सहमति से विकसित हुआ था। किंतु औपनिवेशिक काल में केंद्रीकृत प्रशासनिक व्यवस्था ने पंचायतों की स्वतंत्रता को कम कर दिया और स्थानीय स्वशासन की परंपरा लगभग खत्म हो गई।[1]

स्वतंत्रता मिलने के बाद राष्ट्रपति ने इस ऐतिहासिक रिवाज को फिर से शुरू किया। रजनी कोठारी, एक प्रसिद्ध राजनीतिक चिंतक ने पंचायती राज की स्थापना को राष्ट्रीय नेतृत्व का महत्वपूर्ण कदम बताया जिसके माध्यम से प्रशासनिक विकेंद्रीकरण हुआ और लोकतंत्र की जड़ें ग्राम स्तर तक मजबूत हुईं। ग्रामीण विकास की दिशा में सामुदायिक विकास कार्यक्रम का उद्देश्य था ग्रामीण लोगों को सामाजिक पुनर्निर्माण और आर्थिक नियोजन में सक्रिय रूप से शामिल करना। तथापि सरकारी योजनाओं में आम लोगों की प्रत्यक्ष भागीदारी चाहिए।[2]

इसी पृष्ठभूमि में 1957 में बलवंतराय मेहता की अध्यक्षता में गठित समिति ने लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की संकल्पना को व्यवहार में उतारने के लिए त्रिस्तरीय पंचायती राज संरचना की अनुशंसा की। इन सिफारिशों के आधार पर 2 अक्टूबर 1959 को राजस्थान के नागौर में तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा पंचायती राज प्रणाली का औपचारिक शुभारंभ किया गया। आगे चलकर विभिन्न समितियों जैसे अशोक मेहता समिति, जी.वी.के. राव समिति तथा लक्ष्मीमल सिंघवी समिति ने पंचायती राज संस्थाओं को अधिक सशक्त और उत्तरदायी बनाने हेतु महत्वपूर्ण सुझाव दिए। अंततः **73वें** संविधान संशोधन अधिनियम, **1992** के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया जिससे ग्राम स्तर पर लोकतंत्र को विधिक आधार मिला।[3]

73वें संशोधन के अंतर्गत अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, अन्य पिछड़े वर्गों तथा महिलाओं के लिए आरक्षण का प्रावधान किया गया। यह प्रावधान भारतीय लोकतंत्र में सामाजिक न्याय की दिशा में ऐतिहासिक कदम सिद्ध हुआ। इससे वंचित और दलित वर्गों को राजनीतिक प्रक्रिया में प्रत्यक्ष भागीदारी का अवसर प्राप्त हुआ जो पहले मुख्यतः प्रभुत्वशाली वर्गों तक सीमित था। साथ ही मध्यप्रदेश राज्य ने **73वें** संशोधन की भावना को पूरा करते हुए नवीन पंचायती राज अधिनियम लागू किया जो त्रिस्तरीय व्यवस्था को मजबूत करता है ग्राम पंचायत ,जनपद पंचायत और जिला पंचायत। इस व्यवस्था ने अनुसूचित जाति (दलित) वर्ग को पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्रदान किया। इससे ग्रामीण सत्ता–संरचना बदल गई और नेतृत्व का सामाजिक आधार बढ़ गया।[4]

यदि इस संपूर्ण परिप्रेक्ष्य को गुना जिले के संदर्भ में देखा जाए तो यह स्पष्ट होता है कि पंचायती राज संस्थाओं ने दलित वर्ग के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। गुना जिले की सामाजिक संरचना में अनुसूचित जाति वर्ग की उल्लेखनीय उपस्थिति है जो मुख्यतः कृषि श्रमिक, छोटे किसान अथवा असंगठित क्षेत्र के श्रमिक के रूप में कार्यरत है। आरक्षण प्रावधानों के कारण इस वर्ग से बड़ी संख्या में प्रतिनिधि ग्राम पंचायतों, जनपद पंचायतों एवं जिला पंचायतों में निर्वाचित होकर आए हैं। इससे स्थानीय निर्णय–निर्माण की प्रक्रिया में उनकी भागीदारी सुनिश्चित हुई है।

दलित प्रतिनिधियों की सक्रियता ने प्राथमिकताओं को प्रभावित किया है, जैसे कि मनरेगा, प्रधानमंत्री आवास योजना, स्वच्छ भारत मिशन, सामाजिक सुरक्षा पेंशन, छात्रवृत्ति कार्यक्रम और पेयजल और सड़क निर्माण कार्यक्रम। दलित बस्तियों में आधारभूत सुविधाओं का अधिक विकास देखा गया है जहाँ पंचायतें सक्रिय और उत्तरदायी हैं। इससे पता चलता है कि सामाजिक और आर्थिक सशक्तीकरण राजनीतिक सशक्तीकरण से होता है। लेकिन चुनौतियाँ पूरी तरह से समाप्त नहीं हुई हैं। दलित प्रतिनिधियों को स्वतंत्र रूप से काम करना कई गांवों में मुश्किल होता है, क्योंकि वे सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर है कम प्रशासनिक अनुभव रखते है और स्थानीय प्रभुत्वशाली वर्गों का प्रभाव है। विकास प्रक्रिया को कुछ क्षेत्रों में दलित जनसंख्या का पलायन, कृषि श्रमिकों की बढ़ती संख्या और संसाधनों का असमान वितरण प्रभावित करता है। इसलिए केवल आरक्षण काफी नहीं हैय साथ ही, पंचायत प्रतिनिधियों का प्रशिक्षण, वित्तीय सशक्तीकरण, पारदर्शिता और सामाजिक अंकेक्षण की प्रणाली को मजबूत करना आवश्यक है।

गुना जिले के अध्ययन से यह निष्कर्ष उभरकर सामने आता है कि जहाँ ग्राम सभाएँ सक्रिय हैं और पंचायतें पारदर्शी ढंग से कार्य करती हैं वहाँ दलित वर्ग की भागीदारी और विकास दोनों में सकारात्मक परिवर्तन देखा जाता है। इसके विपरीत जहाँ संस्थागत निष्क्रियता या सामाजिक वर्चस्व विद्यमान है वहाँ विकास की गति मंद रहती है। यही कारण है कि पंचायती राज व्यवस्था केवल एक प्रशासनिक ढाँचा नहीं है, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का प्रभावी साधन है। यह प्रणाली विशेष रूप से गुना जिलों में दलित वर्ग का नेतृत्व बनाने, अधिकारों को समझने, संसाधनों को पाने और सामाजिक सम्मान की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। भविष्य में पंचायती राज संस्थाओं को अधिक वित्तीय और प्रशासनिक स्वायत्तता दी जाए और दलित प्रतिनिधियों को अधिक क्षमता दी जाए तो यह व्यवस्था ग्रामीण समाज में वास्तविक सामाजिक न्याय और समावेशी विकास का आधार बन सकती है।

इस प्रकार पंचायती राज की ऐतिहासिक यात्रा से लेकर वर्तमान संरचना तक का विकासक्रम यह सिद्ध करता है कि लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण के माध्यम से ही ग्रामीण भारत विशेषकर दलित वर्ग के समग्र और सतत विकास को सुनिश्चित किया जा सकता है।

यह अध्ययन दलित वर्ग के विकास में पंचायती राज की भूमिका से संबंध रखता है जिसमें सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक विकास को परिलक्षित रखा गया है, अध्ययन में गुना जिले की **421** ग्राम पंचायत जो पांच जनपदों गुना,बमोरी,आरोन,राघोगढ़,चाचोड़ा में विभक्त है की **95** ग्राम पंचायत के कुल **153** दलित वर्गीय व्यक्तियों जिसमें **52** नेतृत्वकर्ता अर्थात सरपंच पद पर हैं से संबंधित ग्राम पंचायत एवं ग्रामों की सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति उनके द्वारा प्रदत्त सूचना के आधार पर निष्कर्ष तक पहुंचाने एवं संभावित सुझाव देने का प्रयास अध्ययन करता द्वारा किया गया है तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि [5] –

आयु संरचना के संदर्भ में यदि दोनों वर्गों को संयुक्त रूप से देखा जाए तो स्पष्ट होता है कि नेतृत्व और सामान्य समाज दोनों में मध्यम आयु वर्ग का प्रभुत्व है। दलित वर्गीय सरपंचों में लगभग 63 प्रतिशत 31–50 वर्ष आयु वर्ग के हैं जबकि सामान्य नागरिकों में 41–50 वर्ष आयु वर्ग का प्रतिशत 43.56 है। 30 वर्ष से कम आयु वर्ग का प्रतिनिधित्व दोनों में सीमित है। इससे यह स्पष्ट होता है कि पंचायत नेतृत्व अनुभव–आधारित है और युवाओं की भागीदारी अपेक्षाकृत कम है।

वैवाहिक स्थिति के आंकड़े ग्रामीण सामाजिक संरचना को और स्पष्ट करते हैं। 52 में से 52 दलित वर्गीय सरपंच (100 प्रतिशत) विवाहित हैं, जबकि 101 सामान्य नागरिकों में लगभग 95 प्रतिशत विवाहित हैं। सरपंचों में लगभग एक–तिहाई के विवाह 18 वर्ष से कम आयु में संपन्न हुए थे जो ग्रामीण क्षेत्रों में बाल–विवाह की परंपरा की निरंतरता को दर्शाता है। यह आंकड़ा सामाजिक सुधारों की सीमित प्रभावशीलता को इंगित करता है।

उपजातीय वितरण के आंकड़े आंतरिक सामाजिक संरचना को उजागर करते हैं। दलित वर्गीय सरपंचों में लगभग 56 प्रतिशत अहिरवार उपजाति से संबंधित हैं जबकि सामान्य नागरिकों में यह प्रतिशत लगभग 70 तक पहुँचता है। अन्य उपजातियों जैसे जाटव, बलाई, मेहतर आदि का प्रतिनिधित्व अपेक्षाकृत कम है। इससे यह संकेत मिलता है कि दलित वर्ग के भीतर भी नेतृत्व कुछ प्रमुख उपजातियों तक अधिक केंद्रित है।

शिक्षा के क्षेत्र में स्थिति चिंताजनक पाई गई। 52 दलित वर्गीय सरपंचों में से लगभग आधे केवल साक्षर या प्राथमिक स्तर तक शिक्षित हैं। उच्च माध्यमिक और स्नातक स्तर तक पहुँचे सरपंचों का प्रतिशत बहुत कम है। सामान्य नागरिकों में भी निरक्षरता और अल्प शिक्षा

का प्रतिशत उल्लेखनीय हैय लगभग एक–तिहाई उत्तरदाता निरक्षर पाए गए। स्नातक स्तर तक पहुँचे व्यक्तियों की संख्या नगण्य है। यह स्पष्ट करता है कि शिक्षा अभी भी दलित वर्ग के समग्र सशक्तिकरण में बाधा बनी हुई है।

व्यवसायिक संरचना के आंकड़े आर्थिक स्थिति को स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं। दलित वर्गीय सरपंचों में लगभग 36 प्रतिशत कृषि कार्य में संलग्न हैं तथा लगभग 30 प्रतिशत मजदूरी करते हैं। सामान्य नागरिकों में कृषि कार्य से जुड़े लगभग 47 प्रतिशत और मजदूरी से जुड़े लगभग 31 प्रतिशत हैं। सेवा या सरकारी नौकरी में लगे व्यक्तियों का प्रतिशत 10 से भी कम है। संयुक्त रूप से देखा जाए तो लगभग तीन–चौथाई उत्तरदाता कृषि और मजदूरी पर निर्भर हैं। यह आर्थिक असुरक्षा और सीमित संसाधनों की स्थिति को रेखांकित करता है।

भूमि स्वामित्व के संदर्भ में लगभग 60 प्रतिशत दलित वर्गीय सरपंच भूमिहीन या 5 बीघा से कम भूमि के स्वामी हैं। सामान्य नागरिकों में भी यही प्रवृत्ति पाई गई जहाँ अधिकांश सीमांत कृषक या भूमिहीन हैं। बड़े भूमि स्वामित्व वाले परिवारों का प्रतिशत अत्यंत कम है। इससे स्पष्ट है कि पंचायत नेतृत्व भी आर्थिक रूप से संपन्न वर्ग से नहीं बल्कि सीमित संसाधनों वाले परिवारों से उभर रहा है।

आय के आंकड़ों से यह स्पष्ट होता है कि सामान्य नागरिकों में अधिकांश की वार्षिक आय 30,000 से 40,000 रुपये के मध्य है। सरपंचों की आय भी बहुत अधिक भिन्न नहीं है। उच्च आय वर्ग (80,000 रुपये से अधिक वार्षिक आय) में आने वाले परिवारों का प्रतिशत अत्यंत सीमित है। यह दर्शाता है कि आर्थिक उन्नति की गति अभी धीमी है।

सामाजिक भेदभाव के प्रश्न पर लगभग 67 प्रतिशत सामान्य दलित नागरिकों ने मंदिर प्रवेश में भेदभाव की बात स्वीकार की। यह आंकड़ा सामाजिक समानता के क्षेत्र में गंभीर चुनौती की ओर संकेत करता है। दलित वर्गीय सरपंच होने के बावजूद सामाजिक व्यवहार में पूर्ण परिवर्तन नहीं आया है।

राजनीतिक जागरूकता के संयुक्त आंकड़े अपेक्षाकृत सकारात्मक चित्र प्रस्तुत करते हैं। लगभग 84 प्रतिशत उत्तरदाता भारतीय संविधान के बारे में जानकारी रखते हैं। 100 प्रतिशत उत्तरदाता प्रधानमंत्री को जानते हैं, लगभग 97 प्रतिशत मुख्यमंत्री को पहचानते हैं तथा लगभग 89 प्रतिशत सांसद की जानकारी रखते हैं। राजनीति में रुचि रखने वालों का प्रतिशत लगभग 64 है, जबकि लगभग 86 प्रतिशत उत्तरदाता किसी न किसी राजनीतिक गतिविधि में भाग लेने की बात स्वीकार करते हैं। यह दर्शाता है कि राजनीतिक चेतना का स्तर सामाजिक–आर्थिक स्थिति की तुलना में अधिक विकसित है।

ग्राम सभा की बैठकों में सहभागिता के संदर्भ में नियमित भागीदारी का प्रतिशत अपेक्षाकृत कम पाया गया। अनेक उत्तरदाताओं ने बताया कि उन्हें बैठकों की सूचना समय पर नहीं मिलती। इससे स्पष्ट होता है कि लोकतांत्रिक संस्थागत ढाँचा मौजूद है परंतु उसकी कार्यप्रणाली में सुधार की आवश्यकता है।

समग्र रूप से संयुक्त आंकड़ों का विश्लेषण यह सिद्ध करता है कि 52 दलित वर्गीय सरपंच और 101 सामान्य दलित नागरिक सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से लगभग समान पृष्ठभूमि से आते हैं। राजनीतिक प्रतिनिधित्व में वृद्धि हुई है और जागरूकता के स्तर में सुधार देखा गया है, परंतु शिक्षा, आय, भूमि स्वामित्व और सामाजिक समानता के क्षेत्रों में अभी भी पर्याप्त प्रगति अपेक्षित है। पंचायत स्तर पर प्रतिनिधित्व ने अवसर अवश्य प्रदान किया है, किंतु वास्तविक सशक्तिकरण के लिए संरचनात्मक परिवर्तन आवश्यक हैं।

वर्ष 2001 से 2011 के मध्य गुना जिले में पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से दलित वर्ग के विकास का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की संवैधानिक व्यवस्था ने दलित समुदाय को राजनीतिक मंच अवश्य प्रदान किया, किंतु सामाजिक–आर्थिक सशक्तिकरण की प्रक्रिया अभी भी संक्रमणकालीन अवस्था में है। 73वें संविधान संशोधन के बाद ग्राम पंचायतों में अनुसूचित जाति वर्ग के लिए आरक्षण की व्यवस्था ने दलित नेतृत्व को संस्थागत वैधता दी जिससे स्थानीय शासन में उनकी भागीदारी सुनिश्चित हुई। तथापि केवल प्रतिनिधित्व पर्याप्त नहीं होताय वास्तविक परिवर्तन के लिए संसाधनों की उपलब्धता, सामाजिक स्वीकृति तथा प्रशासनिक दक्षता की भी आवश्यकता होती है। गुना जिले की चयनित 95 ग्राम पंचायतों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि इन तत्वों का संतुलन अभी पूर्णतः स्थापित नहीं हो पाया है।

दलित जनसंख्या के वितरण का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि विभिन्न ग्राम पंचायतों में उनकी संख्या अत्यंत विषम है। कुछ ग्रामों में दलित परिवारों की संख्या अत्यल्प है, जबकि कुछ पंचायतों में यह एक हजार से अधिक है। इस असमान वितरण का सीधा प्रभाव विकास योजनाओं की प्राथमिकताओं पर पड़ता है। जहाँ दलित आबादी सघन है वहाँ बस्ती विकास, सड़क, विद्युत और पेयजल जैसी मूलभूत सुविधाओं की मांग अधिक तीव्र रूप में सामने आती है जबकि अल्पसंख्यक स्थिति वाले ग्रामों में सामाजिक बहिष्करण की समस्या अधिक गहरी दिखाई देती है। इस प्रकार, जनसंख्या संरचना स्वयं विकास की दिशा और गति को प्रभावित करती है।

आधारभूत सुविधाओं की स्थिति का विश्लेषण अत्यंत चिंताजनक परिदृश्य प्रस्तुत करता है। अध्ययन में यह पाया गया कि लगभग 96.73 प्रतिशत पंचायतों में स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव दलित बस्तियों की प्रमुख समस्या है। प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों की दूरी, चिकित्सकीय कर्मचारियों की अनुपस्थिति तथा संसाधनों की कमी के कारण सामान्य रोग भी गंभीर रूप धारण कर लेते हैं। शिक्षा की स्थिति भी संतोषजनक नहीं है लगभग 92.80 प्रतिशत पंचायतों में साक्षरता और शैक्षिक सुविधाओं की कमी स्पष्ट रूप से परिलक्षित हुई। विद्यालयों की दूरी, शिक्षकों की अनुपलब्धता और आर्थिक विवशताओं के कारण बालक–बालिकाओं की निरंतर उपस्थिति प्रभावित होती है। विद्युत सुविधा की कमी 90.84 प्रतिशत पंचायतों में पाई गई, जिससे न केवल घरेलू जीवन प्रभावित होता है, बल्कि लघु उद्यमों और अध्ययन की संभावनाएँ भी सीमित हो जाती हैं। सड़क सुविधा का अभाव 87.58 प्रतिशत पंचायतों में दर्ज किया गया जिसके कारण आवागमन बाजार तक पहुँच और आपातकालीन सेवाएँ बाधित होती हैं। पेयजल की समस्या 69.28 प्रतिशत पंचायतों में तथा आवास संबंधी समस्या 42.71 प्रतिशत पंचायतों में पाई गई। इन आँकड़ों से यह स्पष्ट है कि विकास की बुनियादी संरचना अभी भी व्यापक स्तर पर सुदृढ़ नहीं हो पाई है।

राजनीतिक प्रतिनिधित्व के संदर्भ में दलित सरपंचों की भूमिका महत्वपूर्ण है, किंतु उनके समक्ष उपस्थित चुनौतियाँ भी उतनी ही गंभीर हैं। अध्ययन से ज्ञात हुआ कि सभी उत्तरदाताओं ने धन की कमी को प्रमुख बाधा के रूप में स्वीकार किया। पंचायतों को प्राप्त अनुदान अपर्याप्त होने के कारण योजनाओं का समुचित क्रियान्वयन बाधित रहता है। इसके अतिरिक्त 82.69 प्रतिशत सरपंचों ने उच्च जाति के सदस्यों के अपेक्षित सहयोग के अभाव को समस्या बताया जो सामाजिक संरचना में विद्यमान असमानता को रेखांकित करता है। लगभग 69.20 प्रतिशत ने अशिक्षा के कारण प्रशासनिक प्रक्रियाओं को समझने में कठिनाई व्यक्त की जबकि 53.80 प्रतिशत ने जातिगत गुटबंदी को विकास में अवरोध माना। कर्मचारियों का नकारात्मक रवैया और जातीय प्रभुत्व भी अनेक स्थानों पर निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। यह परिदृश्य दर्शाता है कि राजनीतिक आरक्षण के बावजूद सामाजिक चेतना और संस्थागत सहयोग की आवश्यकता बनी हुई है।

विकास योजनाओं के क्रियान्वयन की स्थिति अपेक्षाकृत सकारात्मक और सीमित दोनों प्रकार के संकेत देती है। सावित्रीबाई फुले स्व–सहायता समूह योजना का क्रियान्वयन सभी पंचायतों में पाया गया जिससे महिला सशक्तिकरण और आत्मनिर्भरता को प्रोत्साहन मिला। विद्यार्थी आवास सहायता योजना 96.03 प्रतिशत तथा कस्तूरबा गांधी कन्या विद्यालय योजना लगभग 91 प्रतिशत पंचायतों में लागू पाई गई जिससे बालिका शिक्षा को बढ़ावा मिला। बस्ती विकास योजना 75.24 प्रतिशत पंचायतों में सक्रिय रही जबकि सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का प्रभाव लगभग 57 प्रतिशत पंचायतों तक सीमित रहा। इसके विपरीत अंतर्जातीय विवाह प्रोत्साहन योजना का क्रियान्वयन मात्र 1.98 प्रतिशत पंचायतों में पाया गया, जो सामाजिक परिवर्तन की धीमी गति को दर्शाता है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जहाँ आर्थिक एवं शैक्षिक योजनाएँ अपेक्षाकृत सफल रहीं वहीं सामाजिक समरसता से संबंधित प्रयास अभी भी सीमित प्रभाव ही उत्पन्न कर सके हैं।

आर्थिक संरचना में परिवर्तन का विश्लेषण इस दशक की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक है। वर्ष 2001 में गुना जिले में दलित वर्ग के कुल श्रमिकों की संख्या 54,120 थी, जो वर्ष 2011 में बढ़कर 62,206 हो गई। इस प्रकार कुल 8,086 श्रमिकों की वृद्धि, अर्थात लगभग 14.94 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई। पुरुष श्रमिकों में 19.42 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि महिला श्रमिकों में 8.27 प्रतिशत की वृद्धि पाई गई। यह अंतर संकेत करता है कि आर्थिक गतिविधियों में पुरुषों की भागीदारी अपेक्षाकृत अधिक तेजी से बढ़ी जबकि महिलाओं की वृद्धि सीमित रही। दूसरी ओर कृषक वर्ग में गिरावट एक चिंताजनक प्रवृत्ति के रूप में सामने आई। वर्ष 2001 में दलित कृषकों की संख्या 4,602 थी जो वर्ष 2011 में घटकर 3,725 रह गई अर्थात लगभग 19.05 प्रतिशत की कमी। विशेष रूप से महिला कृषकों में 24.58 प्रतिशत की गिरावट यह दर्शाती है कि भूमिहीनता और कृषि की अलाभकारी स्थिति ने दलित समुदाय को कृषि से विमुख कर मजदूरी एवं अन्य असंगठित क्षेत्रों की ओर प्रेरित किया।

समग्रतः यह दशक गुना जिले में दलित वर्ग के लिए अवसर और चुनौतियों दोनों का काल रहा। राजनीतिक प्रतिनिधित्व में वृद्धि और श्रमिक भागीदारी के विस्तार ने सशक्तिकरण की दिशा में सकारात्मक संकेत दिए किंतु आधारभूत सुविधाओं की कमी सामाजिक अवरोध और आर्थिक अस्थिरता ने विकास की गति को सीमित किया। पंचायती राज व्यवस्था ने दलित वर्ग को आवाज और मंच प्रदान किया है परंतु इस मंच को प्रभावी बनाने के लिए वित्तीय स्वायत्तता, प्रशासनिक प्रशिक्षण और सामाजिक समरसता की आवश्यकता है। यदि इन तत्वों को सुदृढ़ किया जाए तो स्थानीय स्वशासन की यह प्रणाली दलित वर्ग के समग्र विकास का सशक्त माध्यम सिद्ध हो सकती है।

संयुक्त आंकड़ों के आधार पर यह स्पष्ट निष्कर्ष निकलता है कि गुना जिला में दलित वर्ग को पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से राजनीतिक मंच और प्रतिनिधित्व अवश्य प्राप्त हुआ है। 52 दलित वर्गीय सरपंचों का निर्वाचन इस तथ्य का प्रमाण है कि लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण ने नेतृत्व के अवसर प्रदान किए हैं और राजनीतिक जागरूकता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। इससे दलित समुदाय को स्थानीय शासन की प्रक्रिया में भागीदारी तथा निर्णय–निर्माण में भूमिका निभाने का अवसर मिला है।

परंतु सामाजिक–आर्थिक स्थिति के स्तर पर नेतृत्व और सामान्य दलित समाज के बीच कोई व्यापक अंतर दृष्टिगोचर नहीं होता। लगभग तीन–चौथाई उत्तरदाता आज भी कृषि एवं मजदूरी पर निर्भर हैं भूमि स्वामित्व सीमित है आय स्तर निम्न है तथा शिक्षा का स्तर संतोषजनक नहीं कहा जा सकता। यद्यपि राजनीतिक सशक्तिकरण की दिशा में प्रगति हुई है तथापि 67 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा सामाजिक भेदभाव को स्वीकार किया जाना इस बात का संकेत है कि सामाजिक न्याय की प्रक्रिया अभी अधूरी है।

समग्रतःयह दशक गुना जिले में दलित वर्ग के लिए अवसर और चुनौतियों दोनों का काल रहा है। राजनीतिक प्रतिनिधित्व में वृद्धि और श्रमिक भागीदारी के विस्तार ने सशक्तिकरण की दिशा में सकारात्मक संकेत अवश्य दिए हैं किंतु आधारभूत सुविधाओं की कमी सामाजिक अवरोध और आर्थिक अस्थिरता ने विकास की गति को सीमित किया है। अतः अंतिम निष्कर्ष यह है कि पंचायती राज व्यवस्था ने दलित वर्ग को आवाज और मंच प्रदान किया है तथा राजनीतिक सशक्तिकरण की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है किंतु वास्तविक सामाजिक–आर्थिक सशक्तिकरण के लिए शिक्षा के प्रसार, आर्थिक संसाधनों की सुलभ उपलब्धता, वित्तीय स्वायत्तता, प्रशासनिक प्रशिक्षण तथा सामाजिक समरसता के क्षेत्र में दीर्घकालीन एवं प्रभावी नीतिगत हस्तक्षेप अनिवार्य हैं। यदि इन तत्वों को सुदृढ़ किया जाए तो स्थानीय स्वशासन की यह प्रणाली दलित वर्ग के समग्र एवं सतत विकास का सशक्त माध्यम सिद्ध हो सकती है।

सांख्यिकीय परीक्षणों के आधार पर उपकल्पनाओं का मूल्यांकन

इस शोध में उपकल्पनाओं के विश्लेषण के लिए केवल वर्णनात्मक आंकड़ों पर निर्भर न रहते हुए सांख्यिकीय परीक्षण तकनीकों विशेषकर **काई–वर्ग परीक्षण** और **सहसंबंध विश्लेषण** का उपयोग किया गया। इन परीक्षणों के माध्यम से यह पता लगाने का प्रयास किया गया कि पंचायती राज व्यवस्था और दलित वर्ग के राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक सशक्तिकरण के बीच संबंध केवल संयोगिक है या सांख्यिकीय दृष्टि से महत्वपूर्ण भी है।

1) पंचायती राज प्रणाली और दलित राजनीतिक प्रतिनिधित्व के बीच संबंध

इस उपकल्पना के मूल्यांकन के लिए काई–वर्ग परीक्षण का सहारा लिया गया जिसका उद्देश्य दो वर्गीकृत चर के बीच स्वतंत्रता या आपसी संबंध का मूल्यांकन करना होता है। यहाँ पहला चर पंचायत के पद का प्रकार (आरक्षित या अनारक्षित) है जबकि दूसरा चर निर्वाचित प्रतिनिधि की सामाजिक श्रेणी (दलित वर्ग या अन्य) है।

गुना जिले में पंचायत पदों पर दलित प्रतिनिधियों की तादाद विशेषकर 52 दलित सरपंचों का चुनाव यह दर्शाता है कि आरक्षण नीति लागू होने के बाद प्रतिनिधित्व में संरचनात्मक वृद्धि हुई है। जब प्रेक्षित आवृत्तियों की तुलना अपेक्षित आवृत्तियों से की गई तो काई–वर्ग का मान 5 प्रतिशत के महत्व स्तर पर सांख्यिकीय दृष्टि से महत्वपूर्ण पाया गया।

इसका अर्थ यह है कि पंचायतों में दलितों की प्रतिनिधित्व में वृद्धि केवल एक संयोग नहीं है बल्कि यह आरक्षण नीति का सीधा परिणाम है। इसलिए शून्य उपकल्पना को अस्वीकार किया जाता है और वैकल्पिक उपकल्पना को अपनाया जाता है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि पंचायती राज व्यवस्था ने गुना जिले में दलित समुदाय की राजनीतिक भागीदारी को प्रभावी ढंग से बढ़ाया है।

(2) दलितों की राजनीतिक प्रतिनिधित्व और साक्षरता दर के बीच संबंध

इस उपविषय की जांच के लिए सहसंबंध विश्लेषण का उपयोग किया गया। इसमें पंचायतों में दलित प्रतिनिधियों के प्रतिशत और 2001 से 2011 के बीच दलित साक्षरता दर के संबंध की समीक्षा की गई।

गणना के बाद सहसंबंध गुणांक सकारात्मक दिशा में प्राप्त हुआ जिससे यह संकेत मिलता है कि जिन क्षेत्रों में दलितों का प्रतिनिधित्व तुलनात्मक रूप से अधिक था वहाँ साक्षरता दर में भी वृद्धि की प्रवृत्ति देखी गई। हालांकि यह संबंध मध्यम स्तर का पाया गया न कि अत्यधिक मजबूत।

इसका मतलब यह है कि राजनीतिक प्रतिनिधित्व और शैक्षिक विकास के बीच सकारात्मक संबंध जरूर है लेकिन यह पूरी तरह से रैखिक या स्वचालित नहीं है। इसमें अन्य सामाजिक और आर्थिक कारक भी योगदान करते हैं। इसलिए यह उपकल्पना आंशिक रूप से सही साबित होती है।

(3) दलित महिलाओं का प्रतिनिधित्व और सामाजिक सशक्तिकरण

इस उपकल्पना के परीक्षण में काई–वर्ग परीक्षण का उपयोग किया गया पंचायतों में महिला आरक्षण लागू होने के बाद दलित महिला प्रतिनिधियों की संख्या में वृद्धि देखी गई। प्रेक्षित और अपेक्षित आंकड़ों की तुलना से जो परिणाम प्राप्त हुए, वे 5 प्रतिशत महत्व स्तर

पर महत्वपूर्ण पाए गए। इससे यह स्पष्ट होता है कि दलित महिला प्रतिनिधित्व की वृद्धि आकस्मिक नहीं है, बल्कि नीतिगत हस्तक्षेप का परिणाम है। यद्यपि कुछ स्थानों पर प्रतिनिधि पतिश की प्रवृत्ति देखी गई फिर भी सांख्यिकीय दृष्टि से यह सिद्ध होता है कि पंचायतों ने दलित महिलाओं के सार्वजनिक राजनीतिक सशक्तिकरण को एक संस्थागत आधार प्रदान किया है। इसलिए इस उपकल्पना को सिद्ध माना जाता है।

(4) पंचायत योजनाएँ और दलित वर्ग की आर्थिक स्थिति

इस उपकल्पना के परीक्षण के लिए पंचायत योजनाओं में दलित लाभार्थियों की संख्या और कार्यशील दलित जनसंख्या के प्रतिशत के बीच सहसंबंध का विश्लेषण किया गया।

सहसंबंध गुणांक सकारात्मक लेकिन निम्न स्तर पर पाया गया। इसका अर्थ है कि पंचायत योजनाएँ जैसे मनरेगा ने तात्कालिक आर्थिक सहायता प्रदान की है लेकिन दीर्घकालिक आर्थिक आत्मनिर्भरता में बदलाव सीमित रहा है।

यह निष्कर्ष यह दर्शाता है कि योजनाओं का प्रभाव पूरक है संरचनात्मक नहीं। इसलिए यह उपकल्पना आंशिक रूप से प्रमाणित होती है।

(5) राजनीतिक सशक्तिकरण और सामाजिक स्वीकृति के बीच संबंध

काई–वर्ग परीक्षण के माध्यम से पंचायतों में दलित नेतृत्व और सामाजिक सहभागिता के तत्वों के बीच संबंध की जांच की गई। परिणाम सीमांत रूप से महत्वपूर्ण पाए गए जिससे यह संकेत मिलता है कि राजनीतिक प्रतिनिधित्व से सामाजिक स्वीकृति में सुधार की प्रक्रिया शुरू हो गई है लेकिन यह पूर्ण सामाजिक समावेशन का संकेत नहीं है। इस प्रकार यह उपकल्पना भी आंशिक रूप से प्रमाणित होती है।

सांख्यिकीय परीक्षणों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि गुना जिले में पंचायती राज व्यवस्था ने दलित समुदाय के राजनीतिक सशक्तिकरण को संरचनात्मक रूप से मजबूत किया है। राजनीतिक प्रतिनिधित्व और सामाजिक–आर्थिक विकास के बीच एक सकारात्मक संबंध अवश्य स्थापित होता है लेकिन यह संबंध पूरी तरह से प्रत्यक्ष और स्वतः उत्पन्न नहीं होता है। सामाजिक ढांचा, आर्थिक संसाधनों की उपलब्धता, शिक्षा, जागरूकता और प्रशासनिक पारदर्शिता जैसे तत्व इस संबंध को प्रभावित करते हैं। इसलिए यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि पंचायती राज प्रणाली दलित सशक्तिकरण के लिए एक प्रभावी संवैधानिक साधन साबित हुई है लेकिन सामाजिक–आर्थिक समानता के लिए बहुआयामी और दीर्घकालिक प्रयासों की आवश्यकता है।

शोध संबंधी सवालों का उत्तर –

शोध प्रश्न 1. क्या पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से गुना जिले में दलित वर्ग की राजनीतिक भागीदारी में वृद्धि हुई है?

आंकड़ों के अध्ययन और विश्लेषण से यह जाहिर होता है कि 2001 से 2011 तक पंचायत चुनावों में दलित समुदाय की भागीदारी में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है। विशेषकर 52 दलित सरपंचों का चुनाव इस तथ्य का प्रमाण प्रस्तुत करता है कि संवैधानिक आरक्षण ने प्रतिनिधित्व के अवसरों को बढ़ाया है। यह वृद्धि केवल सांख्यिकीय बदलाव नहीं है बल्कि यह ग्रामीण सत्ता की संरचना में दलित समुदाय की औपचारिक उपस्थिति को स्थापित करती है। इसलिए यह स्पष्ट हो जाता है कि पंचायती राज व्यवस्था ने राजनीतिक समावेशन को मजबूत किया है।

शोध प्रश्न 2. क्या आरक्षण व्यवस्था गुना जिले में दलित प्रतिनिधित्व को प्रभावी रूप से सुनिश्चित करने में सफल रही है?

पंचायतों में अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित सीटों पर दलित प्रतिनिधियों का चुनावित होना इस बात का संकेत है कि आरक्षण प्रणाली व्यवहारिक रूप से प्रभावी रही है। सांख्यिकीय विश्लेषण (काई–वर्ग व्याख्या पद्धति) द्वारा यह प्रमाणित किया गया कि आरक्षण और निर्वाचित प्रतिनिधियों की संख्या के बीच एक महत्वपूर्ण संबंध है। इसलिए यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि आरक्षण व्यवस्था ने दलित समुदाय के राजनीतिक प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

शोध प्रश्न 3. क्या राजनीतिक प्रतिनिधित्व ने दलित वर्ग की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में सुधार किया है?

राजनीतिक सहभागिता के साथ दलितों की साक्षरता दर में वृद्धि हुई है और पंचायत योजनाओं के माध्यम से रोजगार के अवसरों का विस्तार हुआ है। हालांकि भूमि स्वामित्व में सीमित बदलाव और कृषि श्रमिकों में दलितों की अधिक संख्या यह इंगित करती है कि

आर्थिक संरचना में व्यापक परिवर्तन नहीं आया है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि राजनीतिक सशक्तिकरण ने सामाजिक–आर्थिक सुधार की दिशा में सकारात्मक प्रभाव डाला है लेकिन यह प्रभाव आंशिक और क्रमिक है।

शोध प्रश्न 4. क्या दलित प्रतिनिधित्व और शैक्षिक प्रगति के मध्य कोई सार्थक संबंध है?

अध्ययन में यह देखा गया कि जहाँ दलित प्रतिनिधित्व की संख्या अधिक थी, वहाँ दलित साक्षरता दर में एक उल्लेखनीय वृद्धि हुई। सहसंबंध विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकला कि इस संबंध का स्तर मध्यम सकारात्मक था यह इस बात को स्पष्ट करता है कि राजनीतिक नेतृत्व शैक्षिक जागरूकता को बढ़ावा देता है हालाँकि उच्च शिक्षा और गुणवत्ता में अभी भी कुछ सीमाएँ मौजूद हैं।

शोध प्रश्न 5. क्या पंचायती राज व्यवस्था ने दलित महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण को प्रोत्साहित किया है?

महिला आरक्षण के बाद दलित महिलाओं की प्रतिनिधित्व संख्या में वृद्धि हुई है। हालांकि कुछ मामलों में परोक्ष (प्रॉक्सी) प्रतिनिधित्व देखा गया है फिर भी उनकी औपचारिक उपस्थिति सार्वजनिक मंच पर सामाजिक जागरूकता के विकास का संकेत देती है। इस विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि पंचायती राज व्यवस्था ने दलित महिलाओं को राजनीतिक अभिव्यक्ति का अवसर मुहैया कराया है।

शोध प्रश्न 6. क्या पंचायत योजनाओं ने दलित वर्ग की कार्यशील जनसंख्या में वृद्धि की है?

मनरेगा और अन्य विकास योजनाओं के जरिए अस्थायी रोजगार का सृजन हुआ जिससे कामकाजी जनसंख्या के प्रतिशत में बढ़ोतरी हुई। हालांकि सहसंबंध का स्तर अपेक्षाकृत कम पाया गया जिससे यह स्पष्ट होता है कि योजनाओं का प्रभाव पूरक है संरचनात्मक नहीं। आर्थिक आत्मनिर्भरता की ओर आगे बढ़ने के लिए अभी और ठोस प्रयासों की आवश्यकता है।

शोध प्रश्न 7. क्या पंचायत स्तर के निर्णयों में दलित प्रतिनिधियों की वास्तविक प्रभावशीलता सुनिश्चित हुई है?

दलित प्रतिनिधियों की औपचारिक उपस्थिति सुनिश्चित की गई है फिर भी उनकी निर्णय प्रक्रिया में प्रभावशीलता पूरी तरह से स्वतंत्र नहीं है। अनेक मामलों में पारंपरिक सामाजिक शक्ति–संतुलन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्रतिनिधित्व और वास्तविक शक्ति के बीच एक अंतर अभी भी मौजूद है।

शोध प्रश्न 8. क्या पंचायती राज व्यवस्था ने गुना जिले में दलित वर्ग के सामाजिक सशक्तिकरण को बढ़ावा दिया है?

अध्ययन से यह सिद्ध हुआ है कि पंचायतों में शामिल होने से दलित समुदाय की सामाजिक दृश्यता, आत्मविश्वास, और सामुदायिक स्वीकृति में बढ़ोतरी हुई है। सार्वजनिक जीवन में उनकी सक्रिय भागीदारी सामाजिक परिवर्तन की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। फिर भी जातिगत संरचनाएँ पूरी तरह से खत्म नहीं हुई हैं। इसलिए सामाजिक सशक्तिकरण की प्रक्रिया शुरू हुई है लेकिन वह अभी भी संक्रमणकालीन चरण में है।

उपरोक्त सभी शोध प्रश्नों के विश्लेषण के परिणामस्वरूप यह स्पष्ट होता है कि गुना जिले में पंचायती राज व्यवस्था ने दलित वर्ग के राजनीतिक सशक्तिकरण को एक संस्थागत ढांचा प्रदान किया है। सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में भी सकारात्मक परिणाम देखने को मिले हैं, लेकिन यह बदलाव धीरे–धीरे और आंशिक रूप से ही हुआ है। राजनीतिक प्रतिनिधित्व सशक्तिकरण की नींव है लेकिन समग्र विकास के लिए शिक्षा, आर्थिक संसाधनों की उपलब्धता, और सामाजिक चेतना का मजबूती से बढ़ावा देना आवश्यक है।

नीतिगत सुझाव एवं भविष्य की दिशा

यह शोध स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि गुना जिले में पंचायती राज व्यवस्था ने दलित समुदाय को राजनीतिक प्रतिनिधित्व देकर लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण प्रक्रिया को मजबूत किया है। 2001 से 2011 के बीच उपलब्ध सांख्यिकीय आंकड़ों के विश्लेषण से यह पता चलता है कि दलित वर्ग की साक्षरता दर में वृद्धि, पंचायतों में चुने गए प्रतिनिधियों की संख्या में बढ़ोतरी और कुछ विकास कार्यक्रमों तक पहुँच में सुधार हुआ है। हालांकि सामाजिक और आर्थिक स्तर पर आवश्यक परिवर्तन समान रूप से नहीं हो पाए हैं। कई ग्राम पंचायतों में अभी भी आय के सीमित स्रोत, कृषि श्रम पर अत्यधिक निर्भरता, मूलभूत सुविधाओं की कमी, और पलायन जैसी समस्याएँ बनी हुई हैं। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि दलित वर्ग के समग्र एवं सतत विकास हेतु बहुआयामी, समन्वित तथा दीर्घकालिक नीतिगत उपाय अपनाए जाएँ।

राजनीतिक सशक्तिकरण को सच्ची प्रभावशीलता देना वर्तमान समय की सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है। जबकि संवैधानिक प्रावधानों के तहत आरक्षण नीति ने दलित वर्ग को पंचायतों में प्रतिनिधित्व उपलब्ध कराया है फिर भी अनेक स्थानों पर यह प्रतिनिधित्व केवल

औपचारिक या प्रतीकात्मक रूप में सीमित रहता है। निर्वाचित दलित प्रतिनिधियों को प्रशासनिक प्रक्रियाओं वित्तीय प्रबंधन और विकास योजनाओं के संचालन का उचित प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए, ताकि वे स्वतंत्र और प्रभावी निर्णय लेने में सक्षम बन सकें। विशेष रूप से दलित महिला प्रतिनिधियों के लिए नेतृत्व विकास कार्यक्रमों का संचालन किया जाना चाहिए ताकि वे सामाजिक रूढ़ियों और संरचनात्मक बाधाओं को पार करके सशक्त भूमिका निभा सकें। पंचायत प्रतिनिधियों और प्रशासनिक अधिकारियों के मध्य समन्वय को सुदृढ़ करना भी आवश्यक है, क्योंकि समन्वित प्रयासों के अभाव में विकास योजनाएँ अपेक्षित परिणाम नहीं दे पातीं।

शिक्षा को दलित समुदाय के सशक्तिकरण का मुख्य आधार मानते हुए प्राथमिक से लेकर उच्च स्तर तक गुणवत्ता वाली शिक्षा की उपलब्धता सुनिश्चित करनी चाहिए। अनुसंधान से पता चलता है कि साक्षरता दर में वृद्धि हुई है लेकिन दलित वर्ग की उच्च शिक्षा और तकनीकी शिक्षा में भागीदारी अभी भी सीमित है। छात्रवृत्ति योजनाओं का प्रभावी और समय पर क्रियान्वयन, डिजिटल शिक्षा केंद्रों की स्थापना, और प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए मार्गदर्शन की व्यवस्था दीर्घकालिक सामाजिक परिवर्तन की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। विशेषकर महिला शिक्षा को बढ़ावा देना सामाजिक जागरूकता और लैंगिक समानता की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम साबित होगा।

आर्थिक सशक्तिकरण के बिना सामाजिक सम्मान और स्थिरता प्राप्त करना असंभव है। वर्तमान अनुसंधान से यह स्पष्ट होता है कि बड़ी संख्या में दलित परिवार कृषि श्रम या असंगठित क्षेत्र पर निर्भर करते हैं, जिससे उनकी आय में अस्थिरता होती है और जीवन स्तर में स्थिरता नहीं आ पाती। पंचायतों के माध्यम से स्वरोजगार की योजनाओं को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए और स्वयं सहायता समूहों को वित्तीय और तकनीकी सहायता प्रदान की जानी चाहिए। कौशल विकास कार्यक्रमों को स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार विकसित किया जाए ताकि युवाओं को वैकल्पिक रोजगार के अवसर मिल सकें। वित्तीय समावेशन को मजबूत करने के लिए बैंकिंग सेवाओं और ऋण सुविधाओं तक आसान पहुँच सुनिश्चित की जानी चाहिए।

2001 से 2011 के बीच कुछ ग्राम पंचायतों में दलित जनसंख्या में कमी या पलायन की प्रवृत्ति देखी गई है। यह स्थिति ग्रामीण इलाकों में रोजगार के सीमित अवसरों और सामाजिक असुरक्षा को दर्शाती है। इसलिए स्थानीय स्तर पर रोजगार सृजन योजनाओं का निर्माण, मनरेगा जैसी योजनाओं का प्रभावी और पारदर्शी कार्यान्वयन, और ग्रामीण उद्यमिता को प्रोत्साहित करना महत्वपूर्ण है। यदि ग्राम स्तर पर पर्याप्त आर्थिक अवसर उत्पन्न किए जाएँ तो पलायन की समस्या को कम किया जा सकता है।

सामाजिक एकता और समानता के बिना विकास अधूरा रह जाता है। भले ही राजनीतिक प्रतिनिधित्व में बढ़ोतरी हुई है मगर सामाजिक भेदभाव की समस्या पूरी तरह से खत्म नहीं हुई है। गांवों को अधिक सक्रिय और सहभागिता वाला बनाना जरुरी है ताकि दलित समुदाय की आवाज निर्णय प्रक्रियाओं में सही तरीके से शामिल हो सके। संवैधानिक मूल्यों, सामाजिक न्याय और समानता के प्रति जागरूकता फैलाने वाले कार्यक्रम ग्रामीण समुदाय में सकारात्मक बदलाव ला सकते हैं। पंचायत स्तर पर शिकायत समाधान प्रणाली को प्रभावी बनाकर सामाजिक सुरक्षा की भावना को मजबूत करना चाहिए।

योजनाओं के कार्यान्वयन में पारदर्शिता और उत्तरदायित्व सुनिश्चित करना भी बहुत जरूरी है। पंचायतों के बजट, व्यय और लाभार्थियों की जानकारी को सार्वजनिक रूप से उपलब्ध होना चाहिए और सामाजिक अंकेक्षण की प्रक्रिया को नियमित रूप से लागू किया जाना चाहिए। डिजिटल माध्यमों का प्रयोग पारदर्शिता को बढ़ाने और भ्रष्टाचार की संभावना को न्यूनतम करने में मदद करेगा इससे लाभार्थियों का विश्वास भी मजबूत होगा।

आधारभूत ढांचे को मजबूत करना दलित–प्रमुख गाँवों के विकास के लिए आवश्यक है। सड़कें, पेयजल, स्वच्छता, स्वास्थ्य सेवाएँ और आवास जैसी सुविधाओं को प्राथमिकता के अनुसार विकसित किया जाना चाहिए। विकास का मूल्यांकन केवल योजनाओं की संख्या पर नहीं बल्कि जीवन स्तर में आए वास्तविक परिवर्तनों के आधार पर होना चाहिए।

यह जरूरी है कि 2011 के बाद उपलब्ध नवीनतम आंकड़ों के आधार पर एक तुलनात्मक अध्ययन फिर से किया जाए ताकि विकास की वर्तमान स्थिति का मूल्यांकन किया जा सके। महिला दलित प्रतिनिधियों की भूमिका, डिजिटल शासन के प्रभाव और सामाजिक पूंजी के विभिन्न आयामों पर भी अलग से जांच की जानी चाहिए, जिससे नीति निर्माण अधिक डेटा–सहित और वास्तविक हो सके।

अंत में यह कहा जा सकता है कि पंचायती राज प्रणाली ने गुना जिले में दलित समुदाय को राजनीतिक सशक्तिकरण का एक महत्वपूर्ण आधार प्रदान किया है लेकिन सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण की दिशा में अभी भी निरंतर योजनाबद्ध और समन्वित प्रयासों की आवश्यकता है। यदि इन नीतिगत सुझावों को सही तरीके से लागू किया जाए तो दलित वर्ग के समग्र विकास सामाजिक न्याय और समान अवसर की स्थापना के लिए महत्वपूर्ण प्रगति संभव हो सकती है।

संदर्भ ग्रंथ

1. के. पी. जायसवाल, प्राचीन भारतीय राज्य व्यवस्था, 1918
2. भारत सरकार, सामुदायिक विकास कार्यक्रम प्रतिवेदन, 1952
3. रजनी कोठारी, भारत की राजनीति, 1970
4. भारत का संविधान, 73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम, 1992
5. पंचायत दर्पण ,जिला गुना मध्यप्रदेश
6. जिला सांख्यिकी कार्यालय, गुना, जिला सांख्यिकी हस्तपुस्तिका (2001–2011) (गुना मध्यप्रदेश शासन, 2011)
7. शोधकर्ता द्वारा संचालित क्षेत्रीय सर्वेक्षण, 95 ग्राम पंचायतें एवं 153 उत्तरदाता (2001–2011) गुना जिला
8. जिला पंचायत कार्यालय, गुना, दलित सरपंच निर्वाचन अभिलेख (2001–2011)
9. प्राथमिक सर्वेक्षण, राजनीतिक जागरूकता एवं ग्राम सभा सहभागिता संबंधी आँकड़े, गुना जिला
10. जनगणना आँकड़ों पर आधारित कृषि व्यवसाय संबंधी सांख्यिकीय विश्लेषण (2001–2011),गुना जिला